Young Researcher
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2277-7911 | Impact Factor – 7.025| *Website:* https://yra.ijaar.co.in/
Volume-15, Issue-1 | January – February – March 2026

Original Article

संजीव के उपन्यास धार में चित्रित आदिवासी स्त्री जीवन का यथार्थ : सामाजिक, सांस्कृतिक एवं अस्तित्वगत विमर्श

अर्चना कुमारी

शोधार्थी, स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग

वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय आरा, बिहार

Manuscript ID:
yrj-150106

ISSN: 2277-7911
Impact Factor – 7.025

Volume 15
Issue 1
Jan-Feb-Mar.- 2026
Pp. 37 – 44

Submitted: 08 Jan. 2026
Revised: 24 Jan. 2026
Accepted: 10 Feb. 2026
Published: 10 Mar. 2026

Corresponding Author:
अर्चना कुमारी

Quick Response Code:

Web. https://yra.ijaar.co.in/

DOI:
10.5281/zenodo.21239039

DOI Link:
https://doi.org/10.5281/zenodo.21239039

सारांश:

*समकालीन हिंदी साहित्य में आदिवासी जीवन, संस्कृति और अस्मिता के प्रश्नों को केंद्र में रखकर लिखे गए उपन्यासों में कथाकार **संजीव** का धार एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण और विचारोत्तेजक उपन्यास है। यह कृति केवल आदिवासी समाज के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन का यथार्थपरक चित्रण ही नहीं करती, बल्कि आदिवासी स्त्री के बहुआयामी जीवन-संघर्ष, उसकी अस्मिता, श्रम-संस्कृति, प्रकृति से उसके गहरे संबंध तथा शोषण के विरुद्ध उसके प्रतिरोध को भी अत्यंत संवेदनशीलता और प्रामाणिकता के साथ अभिव्यक्त करती है। संजीव ने आदिवासी स्त्री को मुख्यधारा के साहित्य में प्रचलित रूढ़ छवियों से अलग एक स्वाभिमानी, कर्मठ, संघर्षशील और आत्मनिर्णय की क्षमता से संपन्न व्यक्तित्व के रूप में प्रस्तुत किया है, जो प्रतिकूल परिस्थितियों में भी अपने अस्तित्व और सामुदायिक पहचान की रक्षा के लिए निरंतर संघर्षरत रहती है।*

*उपन्यास में आदिवासी स्त्री का जीवन केवल घरेलू दायित्वों तक सीमित नहीं है, बल्कि वह परिवार की आर्थिक व्यवस्था, कृषि, वनोपज संग्रह, श्रम, लोकसंस्कृति के संरक्षण तथा सामुदायिक जीवन की निरंतरता में समान रूप से सहभागी है। इसके बावजूद उसे पितृसत्तात्मक मानसिकता, आर्थिक विषमता, प्रशासनिक उपेक्षा, ठेकेदारी व्यवस्था, पूँजीवादी शोषण, लैंगिक हिंसा तथा विकास परियोजनाओं के कारण उत्पन्न विस्थापन जैसी जटिल समस्याओं का सामना करना पड़ता है। धार यह भी स्पष्ट करता है कि आदिवासी स्त्री का **जल–जंगल–ज़मीन** से संबंध केवल आजीविका का प्रश्न नहीं, बल्कि उसकी सांस्कृतिक स्मृति, सामुदायिक पहचान, पर्यावरणीय चेतना और अस्तित्व का आधार है। जब प्राकृतिक संसाधनों पर बाहरी शक्तियों का नियंत्रण स्थापित होता है, तब सबसे अधिक प्रभावित आदिवासी महिलाएँ होती हैं, जिनका जीवन, श्रम, संस्कृति और सामाजिक सुरक्षा गहरे संकट में पड़ जाती है।*

प्रस्तुत शोध-पत्र में धार के आधार पर आदिवासी स्त्री जीवन के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक तथा अस्तित्वगत पक्षों का आलोचनात्मक एवं विश्लेषणात्मक

Young Researcher
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2277-7911 | Impact Factor – 7.025| *Website: https://yra.ijaar.co.in/*
Volume-15, Issue-1 | January – February – March 2026

अध्ययन किया गया है। साथ ही, स्त्री-विमर्श, आदिवासी-विमर्श और सामाजिक यथार्थवाद के परिप्रेक्ष्य में यह समझने का प्रयास किया गया है कि संजीव किस प्रकार आदिवासी स्त्री की समस्याओं को व्यापक सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक संरचनाओं से जोड़ते हैं। शोध-पत्र यह प्रतिपादित करता है कि धार केवल आदिवासी जीवन का आख्यान नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, लैंगिक समानता, पर्यावरणीय संवेदनशीलता और मानवीय गरिमा की स्थापना का एक सशक्त साहित्यिक दस्तावेज़ है। इस दृष्टि से यह उपन्यास समकालीन हिंदी साहित्य में आदिवासी स्त्री विमर्श की एक प्रतिनिधि कृति के रूप में विशिष्ट स्थान रखता है तथा वर्तमान सामाजिक परिप्रेक्ष्य में इसकी प्रासंगिकता और भी अधिक बढ़ जाती है।

प्रमुख शब्द: संजीव, धार, आदिवासी स्त्री, आदिवासी विमर्श, स्त्री-विमर्श, सामाजिक यथार्थ, जल–जंगल–ज़मीन, विस्थापन, अस्मिता, श्रम-संस्कृति, प्रतिरोध, सांस्कृतिक पहचान।

Creative Commons

OPEN ACCESS

Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)
This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International License (CC BY-NC-SA 4.0), *which permits others to remix, adapt, and build upon the work non-commercially, provided that appropriate credit is given and that any new creations are licensed under identical terms.*
How to cite this article:
अर्चना कुमारी (2026). संजीव के उपन्यास धार में चित्रित आदिवासी स्त्री जीवन का यथार्थ : सामाजिक, सांस्कृतिक एवं अस्तित्वगत विमर्श. Young Researcher, 15(1), 37 – 44. https://doi.org/10.5281/zenodo.21239039

भूमिका:

समकालीन हिंदी साहित्य में आदिवासी विमर्श ने साहित्यिक चिंतन को एक नई दिशा प्रदान की है। लंबे समय तक साहित्य के केंद्र में मुख्यधारा का समाज रहा, जबकि आदिवासी समुदाय, उसका जीवन, संस्कृति, संघर्ष और अस्तित्व हाशिये पर बने रहे। स्वतंत्रता के बाद सामाजिक न्याय, लोकतांत्रिक चेतना और मानवाधिकार संबंधी विचारों के विकास के साथ साहित्य में उन समुदायों की ओर ध्यान गया जिन्हें इतिहास और सत्ता ने उपेक्षित रखा था। इसी प्रक्रिया में दलित विमर्श, स्त्री-विमर्श और आदिवासी विमर्श जैसी धाराओं का विकास हुआ। इन विमर्शों ने साहित्य को केवल सौंदर्यबोध का माध्यम न मानकर सामाजिक परिवर्तन का सशक्त उपकरण बनाया।

आदिवासी समाज भारतीय सभ्यता का अत्यंत प्राचीन और महत्वपूर्ण अंग है। इस समाज की अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक परंपराएँ, जीवन-पद्धति, लोकज्ञान, प्रकृति-दृष्टि और सामुदायिक जीवन-मूल्य हैं। जल, जंगल और जमीन इनके जीवन के मूल आधार हैं। आधुनिक विकास की परियोजनाओं, औद्योगीकरण, खनन, वन कानूनों और बाजारवादी व्यवस्था ने आदिवासी समाज के पारंपरिक जीवन को गहरे स्तर पर प्रभावित किया है। इसका सबसे गंभीर प्रभाव आदिवासी स्त्रियों पर पड़ा है, क्योंकि वे परिवार, श्रम, संस्कृति और प्राकृतिक संसाधनों

से सबसे अधिक जुड़ी होती हैं। इसलिए आदिवासी स्त्री का प्रश्न केवल लैंगिक समानता का प्रश्न नहीं, बल्कि अस्तित्व, संस्कृति और सामाजिक न्याय का प्रश्न भी है।

आदिवासी स्त्री का जीवन मुख्यधारा की स्त्री से कई दृष्टियों से भिन्न है। वह केवल गृहस्थ जीवन तक सीमित नहीं रहती, बल्कि कृषि कार्य, वनोपज संग्रह, पशुपालन, जल-संग्रह, परिवार के पालन-पोषण तथा सामुदायिक गतिविधियों में समान रूप से भाग लेती है। आर्थिक दृष्टि से उसका योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण होता है, फिर भी उसे पर्याप्त सम्मान और निर्णयकारी भूमिका प्राप्त नहीं होती। आधुनिक पूँजीवादी व्यवस्था, ठेकेदारी तंत्र, प्रशासनिक भ्रष्टाचार और बाजारवादी संस्कृति ने उसके श्रम का शोषण बढ़ाया है। अनेक बार वह यौन उत्पीड़न, विस्थापन, बेरोज़गारी और सांस्कृतिक विघटन जैसी समस्याओं का भी सामना करती है।

समकालीन हिंदी कथा-साहित्य में अनेक लेखकों ने आदिवासी जीवन को अपनी रचनाओं का विषय बनाया है, किंतु कथाकार **संजीव** ने इस विषय को विशेष संवेदनशीलता, गहन सामाजिक दृष्टि और यथार्थपरक प्रस्तुति के साथ अभिव्यक्त किया है। संजीव उन रचनाकारों में हैं जिन्होंने साहित्य को समाज के उपेक्षित वर्गों की आवाज़ बनाया। उनके उपन्यासों में भारतीय समाज की जटिल संरचना, वर्गीय असमानता, जातीय विभाजन, आर्थिक विषमता और मानवीय संघर्षों का व्यापक चित्रण मिलता है। *धार* उनकी ऐसी ही महत्त्वपूर्ण कृति है, जिसमें आदिवासी जीवन के बहुआयामी यथार्थ को अत्यंत प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत किया गया है।

धार का केंद्रीय सरोकार केवल आदिवासी समाज का वर्णन करना नहीं है, बल्कि उस सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था की आलोचना करना भी है जो आदिवासियों के जीवन, संस्कृति और प्राकृतिक संसाधनों पर निरंतर आक्रमण करती रही है। उपन्यास में आदिवासी स्त्री इस संघर्ष का सबसे जीवंत और प्रभावशाली पक्ष बनकर उभरती है। वह परिवार की संरक्षिका, श्रमशील कर्मयोगिनी, सांस्कृतिक परंपराओं की संवाहक तथा अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करने वाली चेतनाशील व्यक्तित्व के रूप में चित्रित होती है। संजीव ने उसे करुणा का पात्र बनाकर नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की सक्रिय शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया है।

यह उपन्यास यह भी स्पष्ट करता है कि आदिवासी स्त्री का प्रकृति से संबंध केवल आर्थिक उपयोगिता तक सीमित नहीं है। जंगल उसके लिए भोजन, ईंधन, औषधि और आजीविका का स्रोत होने के साथ-साथ उसकी सांस्कृतिक स्मृति, धार्मिक आस्था और सामुदायिक पहचान का आधार भी है। जब जंगलों का विनाश होता है या विकास परियोजनाओं के नाम पर आदिवासी समुदायों का विस्थापन किया जाता है, तब सबसे अधिक संकट स्त्रियों के जीवन पर आता है। उन्हें न केवल रोजगार और संसाधनों से वंचित होना पड़ता है, बल्कि अपनी सांस्कृतिक जड़ों और सामाजिक सुरक्षा से भी दूर होना पड़ता है। इस प्रकार *धार* में जल–जंगल–जमीन का प्रश्न स्त्री-अस्तित्व के प्रश्न से गहरे रूप में जुड़ जाता है।

प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य *धार* में चित्रित आदिवासी स्त्री जीवन के विविध पक्षों का आलोचनात्मक विश्लेषण करना है। इसमें सामाजिक जीवन, आर्थिक संरचना, श्रम-संस्कृति, सांस्कृतिक परंपराएँ, लैंगिक शोषण, स्त्री अस्मिता, प्रतिरोध की चेतना तथा जल–

जंगल–जमीन से जुड़े प्रश्नों का अध्ययन किया जाएगा। साथ ही यह भी स्पष्ट करने का प्रयास किया जाएगा कि संजीव का यह उपन्यास आदिवासी स्त्री-विमर्श को किस प्रकार नई वैचारिक दिशा प्रदान करता है और समकालीन हिंदी साहित्य में उसकी क्या प्रासंगिकता है।

अंततः कहा जा सकता है कि *धार* केवल एक साहित्यिक कृति नहीं, बल्कि भारतीय लोकतंत्र, विकास मॉडल और सामाजिक न्याय की अवधारणाओं पर गंभीर प्रश्न उठाने वाला उपन्यास है। इसमें चित्रित आदिवासी स्त्री का जीवन हमें यह समझने का अवसर देता है कि किसी भी समाज की प्रगति तभी सार्थक मानी जा सकती है जब उसके सबसे उपेक्षित वर्गों, विशेषकर आदिवासी महिलाओं, को सम्मान, समान अवसर, संसाधनों पर अधिकार और गरिमापूर्ण जीवन उपलब्ध हो। इसी दृष्टि से *धार* हिंदी साहित्य में आदिवासी स्त्री जीवन के यथार्थ का एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज़ सिद्ध होता है।

संजीव का व्यक्तित्व एवं कृतित्व :

समकालीन हिंदी कथा-साहित्य में संजीव का नाम उन अग्रणी रचनाकारों में लिया जाता है जिन्होंने साहित्य को सामाजिक यथार्थ, मानवीय संवेदना और परिवर्तनकारी चेतना का सशक्त माध्यम बनाया। उन्होंने अपने कथा-साहित्य के माध्यम से भारतीय समाज के उन वर्गों के जीवन-संघर्ष को अभिव्यक्ति दी, जो लंबे समय तक साहित्य और सत्ता—दोनों की मुख्यधारा से उपेक्षित रहे। दलित, आदिवासी, श्रमिक, किसान, स्त्री तथा अन्य वंचित समुदायों के जीवन की जटिलताओं, संघर्षों और सामाजिक विषमताओं को संजीव ने अत्यंत संवेदनशीलता, प्रामाणिकता और वैचारिक प्रतिबद्धता के साथ चित्रित किया है। उनका साहित्य केवल सामाजिक यथार्थ का दस्तावेज़ नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन और मानवीय गरिमा की स्थापना का एक सशक्त साहित्यिक हस्तक्षेप भी है।

संजीव का जन्म **6 जुलाई 1947** को उत्तर प्रदेश के **सुल्तानपुर जनपद** के एक साधारण परिवार में हुआ। उनका मूल नाम **राम संजीवन प्रसाद** है, जबकि साहित्य-जगत में वे **संजीव** के नाम से प्रसिद्ध हैं। प्रारंभिक जीवन आर्थिक अभावों और संघर्षों के बीच बीता, जिसका प्रभाव उनके व्यक्तित्व और रचनात्मक दृष्टिकोण पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। उन्होंने विज्ञान विषय से शिक्षा प्राप्त की, किंतु साहित्य और समाज के प्रति उनकी गहरी रुचि ने उन्हें कथा-साहित्य की ओर प्रेरित किया। जीवन के विविध अनुभवों, सामाजिक विषमताओं तथा आम जन के संघर्षों ने उनके लेखन को व्यापक यथार्थवादी आधार प्रदान किया।

संजीव का साहित्यिक जीवन कहानी लेखन से प्रारंभ हुआ, परंतु शीघ्र ही उन्होंने उपन्यास, निबंध और अन्य गद्य-विधाओं में भी उल्लेखनीय योगदान दिया। उनकी कहानियों और उपन्यासों में भारतीय समाज के बदलते स्वरूप, आर्थिक असमानता, जातिगत विभाजन, सत्ता की दमनकारी प्रवृत्तियों, सांप्रदायिक तनाव, विस्थापन, श्रमिक जीवन, स्त्री-अस्मिता तथा आदिवासी समाज की समस्याओं का बहुआयामी चित्रण मिलता है। वे ऐसे रचनाकार हैं जो समाज की वास्तविक समस्याओं को केवल प्रस्तुत नहीं करते, बल्कि उनके कारणों और संभावित समाधानों पर भी गंभीर चिंतन करते हैं।

संजीव के प्रमुख उपन्यासों में *धार*, *जंगल जहाँ शुरू होता है*, *सावधान! नीचे आग है*, *सूत्रधार*, *पाँव तले*

की दूब आदि उल्लेखनीय हैं। इन कृतियों में उन्होंने भारतीय समाज के विविध वर्गों के जीवन-संघर्ष को यथार्थवादी दृष्टि से चित्रित किया है। विशेष रूप से *धार* और *जंगल जहाँ शुरू होता है* में आदिवासी समाज, उनकी संस्कृति, प्राकृतिक जीवन, सामाजिक संरचना तथा शोषण की प्रक्रिया का अत्यंत सजीव और विश्वसनीय चित्रण मिलता है। संजीव की रचनाओं में आदिवासी जीवन किसी रोमानी आकर्षण का विषय नहीं, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक यथार्थ का अभिन्न अंग है।

संजीव की रचनात्मक दृष्टि का सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष उनका **यथार्थवाद** है। वे समाज के कटु यथार्थ को बिना किसी कृत्रिम आदर्शवाद या भावुकता के प्रस्तुत करते हैं। उनके पात्र जीवन की वास्तविक परिस्थितियों से संघर्ष करते हुए दिखाई देते हैं। विशेष रूप से स्त्री पात्रों के चित्रण में संजीव अत्यंत सजग और संवेदनशील हैं। वे स्त्री को केवल करुणा या दया की पात्र के रूप में प्रस्तुत नहीं करते, बल्कि उसे संघर्षशील, आत्मसम्मानी, निर्णयक्षम और परिवर्तनकारी शक्ति के रूप में स्थापित करते हैं। यही कारण है कि उनके साहित्य में स्त्री-विमर्श केवल लैंगिक समानता तक सीमित नहीं रहता, बल्कि सामाजिक न्याय, आर्थिक स्वतंत्रता और मानवीय गरिमा के व्यापक प्रश्नों से जुड़ जाता है।

संजीव का कथा-साहित्य भारतीय लोकतंत्र के विकास मॉडल और उसके अंतर्विरोधों पर भी गंभीर प्रश्न उठाता है। औद्योगीकरण, खनन, वन नीति, पूँजीवादी विस्तार और तथाकथित विकास योजनाओं के कारण उत्पन्न विस्थापन की त्रासदी उनके साहित्य का महत्त्वपूर्ण विषय है। वे दिखाते हैं कि विकास का लाभ समाज के सीमित वर्ग तक पहुँचता है, जबकि इसकी सबसे बड़ी कीमत आदिवासी, किसान और श्रमिक समुदायों को चुकानी पड़ती है। विशेष रूप से आदिवासी स्त्रियाँ इस प्रक्रिया में दोहरे-तिहरे शोषण का शिकार होती हैं। इस प्रकार संजीव का साहित्य सामाजिक न्याय और समतामूलक विकास की आवश्यकता पर बल देता है।

भाषा और शिल्प की दृष्टि से भी संजीव का साहित्य अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। उनकी भाषा सहज, संप्रेषणीय, प्रभावशाली तथा लोकजीवन के निकट है। वे पात्रों की सामाजिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के अनुरूप लोकभाषा, आंचलिक शब्दावली, मुहावरों और लोक-प्रयोगों का स्वाभाविक उपयोग करते हैं, जिससे उनकी रचनाएँ अधिक जीवंत और विश्वसनीय बन जाती हैं। संवादों की सजीवता, घटनाओं की यथार्थपरक प्रस्तुति तथा प्रतीकात्मकता उनके कथा-शिल्प को विशिष्ट बनाती है।

आदिवासी विमर्श के संदर्भ में संजीव का योगदान विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उन्होंने आदिवासी समाज को बाहरी दृष्टि से नहीं, बल्कि उसके जीवन-संघर्ष, सांस्कृतिक मूल्यों, प्रकृति से संबंध और सामाजिक संरचना के भीतर प्रवेश करके समझने का प्रयास किया है। *धार* में आदिवासी स्त्री के माध्यम से उन्होंने यह स्थापित किया है कि जल, जंगल और ज़मीन केवल प्राकृतिक संसाधन नहीं हैं, बल्कि आदिवासी समुदाय की सांस्कृतिक स्मृति, सामुदायिक पहचान और अस्तित्व के आधार हैं। इसलिए इन संसाधनों पर संकट का अर्थ केवल आर्थिक हानि नहीं, बल्कि पूरे समुदाय की सांस्कृतिक और मानवीय पहचान का संकट भी है।

संजीव का साहित्य इस बात का प्रमाण है कि एक प्रतिबद्ध लेखक समाज के उपेक्षित और वंचित वर्गों की

Young Researcher
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2277-7911 | Impact Factor – 7.025| *Website:* https://yra.ijaar.co.in/
Volume-15, Issue-1 | January – February – March 2026

आवाज़ बन सकता है। उनकी रचनाएँ सामाजिक चेतना, लोकतांत्रिक मूल्यों और मानवीय संवेदनाओं को नई दिशा प्रदान करती हैं। *धार* के माध्यम से उन्होंने आदिवासी स्त्री जीवन के उन पक्षों को उजागर किया है, जिन्हें मुख्यधारा का साहित्य लंबे समय तक उपेक्षित करता रहा। इस दृष्टि से संजीव केवल एक सफल कथाकार नहीं, बल्कि सामाजिक यथार्थ के सजग व्याख्याकार और मानवीय मूल्यों के समर्थ साहित्यकार हैं।

अतः स्पष्ट है कि संजीव का व्यक्तित्व और कृतित्व सामाजिक प्रतिबद्धता, यथार्थवादी दृष्टि तथा मानवीय संवेदना का उत्कृष्ट उदाहरण है। उनका साहित्य भारतीय समाज के वंचित समुदायों के जीवन-संघर्ष का प्रामाणिक दस्तावेज़ होने के साथ-साथ सामाजिक न्याय, समानता और मानवीय गरिमा की स्थापना का सशक्त साहित्यिक माध्यम भी है। विशेषतः *धार* में आदिवासी स्त्री जीवन का चित्रण उनकी व्यापक सामाजिक दृष्टि, गहन संवेदनशीलता और रचनात्मक प्रतिबद्धता का सशक्त प्रमाण प्रस्तुत करता है।

उपन्यास *धार* : कथावस्तु एवं पृष्ठभूमि :

समकालीन हिंदी उपन्यासों में संजीव का *धार* एक ऐसी महत्त्वपूर्ण कृति है, जिसने आदिवासी जीवन के बहुआयामी यथार्थ को केंद्र में स्थापित किया। यह उपन्यास केवल किसी विशेष जनजातीय समुदाय की जीवन-गाथा नहीं है, बल्कि भारतीय समाज में लंबे समय से उपेक्षित आदिवासी वर्ग के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक जीवन का संवेदनशील एवं यथार्थपरक दस्तावेज़ है। संजीव ने इस उपन्यास के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि आदिवासी समाज का संघर्ष केवल गरीबी या पिछड़ेपन का संघर्ष नहीं, बल्कि अपने अस्तित्व, अस्मिता, संस्कृति और प्राकृतिक संसाधनों पर अधिकार की रक्षा का संघर्ष है। विशेष रूप से आदिवासी स्त्री इस संघर्ष के केंद्र में उपस्थित दिखाई देती है, क्योंकि वह परिवार, श्रम, संस्कृति तथा प्रकृति—चारों स्तरों पर समुदाय की आधारशिला है।

उपन्यास का परिचय:

धार संजीव की उन प्रतिनिधि कृतियों में है, जिनमें सामाजिक यथार्थ अपनी संपूर्ण जटिलता के साथ अभिव्यक्त हुआ है। उपन्यास का कथानक आदिवासी अंचल की पृष्ठभूमि में विकसित होता है, जहाँ जल, जंगल और ज़मीन केवल प्राकृतिक संसाधन नहीं, बल्कि समुदाय के जीवन, संस्कृति और पहचान का आधार हैं। लेखक ने आदिवासी समाज की जीवन-पद्धति, श्रम-संस्कृति, पारिवारिक संबंधों, लोकविश्वासों तथा सामुदायिक मूल्यों का चित्रण अत्यंत प्रामाणिकता के साथ किया है।

उपन्यास का शीर्षक **"धार"** अत्यंत अर्थगर्भित और प्रतीकात्मक है। "धार" का सामान्य अर्थ प्रवाह, तीक्ष्णता या जीवनदायिनी शक्ति से जुड़ता है, किंतु उपन्यास में यह संघर्ष, चेतना, परिवर्तन और प्रतिरोध का प्रतीक बनकर उभरता है। यह शीर्षक संकेत करता है कि समाज में परिवर्तन तभी संभव है जब अन्याय के विरुद्ध प्रतिरोध की धार जीवित रहे। आदिवासी स्त्रियाँ इसी संघर्षशील चेतना की सबसे सशक्त प्रतिनिधि के रूप में सामने आती हैं।

Young Researcher
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2277-7911 | Impact Factor – 7.025| *Website:* https://yra.ijaar.co.in/
Volume-15, Issue-1 | January – February – March 2026

कथावस्तु :

उपन्यास का कथानक आदिवासी समाज के दैनिक जीवन, उनके श्रम, संस्कृति, पारिवारिक संबंधों तथा बदलते सामाजिक परिवेश के इर्द-गिर्द विकसित होता है। कथा में यह दिखाया गया है कि आदिवासी समुदाय प्रकृति के साथ संतुलित और सामंजस्यपूर्ण जीवन व्यतीत करता है। जंगल उसके लिए केवल संसाधन नहीं, बल्कि जीवन का आधार, आस्था का केंद्र और सांस्कृतिक पहचान का प्रतीक है। किंतु आधुनिक विकास योजनाएँ, खनन परियोजनाएँ, औद्योगीकरण, वन कानून तथा बाहरी शक्तियों का हस्तक्षेप इस संतुलन को भंग कर देता है।

कथानक में आदिवासी समाज के सामने उपस्थित अनेक समस्याएँ उभरकर आती हैं—भूमि से बेदखली, विस्थापन, बेरोज़गारी, गरीबी, अशिक्षा, प्रशासनिक उपेक्षा, ठेकेदारी व्यवस्था, पुलिसिया दमन तथा पूँजीवादी शोषण। इन परिस्थितियों का सबसे गहरा प्रभाव आदिवासी स्त्रियों पर पड़ता है। वे परिवार की आर्थिक जिम्मेदारियों का निर्वहन करती हैं, खेतों में कार्य करती हैं, जंगल से वनोपज एकत्र करती हैं और साथ ही परिवार एवं संस्कृति की निरंतरता बनाए रखने का दायित्व भी निभाती हैं। इसके बावजूद उन्हें सम्मान और अधिकारों से वंचित रहना पड़ता है।

संजीव ने कथा को किसी एक व्यक्ति के जीवन तक सीमित न रखकर पूरे आदिवासी समाज की सामूहिक पीड़ा और संघर्ष का रूप दिया है। इसलिए *धार* का कथानक व्यक्तिगत न होकर सामुदायिक अनुभवों का प्रतिनिधित्व करता है। यही इसकी सबसे बड़ी विशेषता है।

सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि :

उपन्यास की सामाजिक पृष्ठभूमि आदिवासी समाज की सामुदायिक जीवन-व्यवस्था पर आधारित है। यहाँ पारस्परिक सहयोग, श्रम की गरिमा, प्रकृति के प्रति सम्मान तथा सामूहिक निर्णय की परंपरा प्रमुख है। आदिवासी समाज में स्त्री केवल परिवार की सदस्य नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक गतिविधियों की सक्रिय सहभागी है। वह कृषि, वनोपज संग्रह, पशुपालन, घरेलू कार्य तथा सांस्कृतिक आयोजनों में समान रूप से भाग लेती है।

सांस्कृतिक दृष्टि से उपन्यास में लोकगीत, लोकनृत्य, पर्व-त्योहार, पारंपरिक रीति-रिवाज, धार्मिक विश्वास और प्रकृति-पूजा का अत्यंत सजीव चित्रण मिलता है। लेखक यह स्थापित करते हैं कि आदिवासी संस्कृति प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व की संस्कृति है। जंगल, नदी, पर्वत और धरती उनके जीवन के अभिन्न अंग हैं। इसलिए इन प्राकृतिक संसाधनों का विनाश केवल पर्यावरणीय संकट नहीं, बल्कि सांस्कृतिक संकट भी है।

आदिवासी स्त्री की उपस्थिति :

धार की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें आदिवासी स्त्री को कथा के केंद्र में प्रतिष्ठित किया गया है। वह केवल सहायक पात्र नहीं, बल्कि संघर्ष, श्रम, संवेदना और प्रतिरोध की वाहक है। लेखक ने उसके जीवन की वास्तविक समस्याओं—आर्थिक अभाव, सामाजिक उपेक्षा, लैंगिक शोषण, प्रशासनिक अन्याय तथा विस्थापन—को अत्यंत मार्मिकता और यथार्थ के साथ प्रस्तुत किया है। साथ ही यह भी दिखाया गया है कि वह विपरीत परिस्थितियों में टूटती नहीं, बल्कि अपने

आत्मसम्मान, परिवार और समुदाय की रक्षा के लिए संघर्ष करती है।

संजीव आदिवासी स्त्री को दया की पात्र के रूप में नहीं, बल्कि परिवर्तन की सक्रिय शक्ति के रूप में चित्रित करते हैं। उसके व्यक्तित्व में श्रमशीलता, साहस, आत्मसम्मान और सामुदायिक उत्तरदायित्व का सुंदर समन्वय दिखाई देता है। यही दृष्टि उपन्यास को पारंपरिक स्त्री-चित्रण से अलग एक नई वैचारिक ऊँचाई प्रदान करती है।

उपन्यास का उद्देश्य :

धार का उद्देश्य केवल आदिवासी जीवन का वर्णन करना नहीं है, बल्कि उस सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था की आलोचना करना है, जिसने आदिवासी समाज को विकास के नाम पर हाशिए पर धकेल दिया है। उपन्यास यह प्रश्न उठाता है कि यदि विकास की प्रक्रिया किसी समुदाय को उसकी भूमि, संस्कृति और पहचान से ही वंचित कर दे, तो उसे वास्तविक विकास नहीं कहा जा सकता।

उपन्यास का एक प्रमुख उद्देश्य आदिवासी स्त्री के संघर्ष और अस्मिता को साहित्य के केंद्र में स्थापित करना भी है। संजीव यह स्पष्ट करते हैं कि आदिवासी स्त्री केवल शोषण की शिकार नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की वाहक भी है। उसके श्रम, साहस, सांस्कृतिक चेतना और प्रतिरोध की भावना को समझे बिना आदिवासी समाज के वास्तविक स्वरूप को नहीं समझा जा सकता।

अतः *धार* केवल एक कथा-रचना नहीं, बल्कि भारतीय समाज की विकास नीतियों, सत्ता-संरचना, सामाजिक असमानता और मानवीय मूल्यों पर गंभीर प्रश्न उठाने वाला उपन्यास है। यह कृति आदिवासी जीवन की समस्याओं के साथ-साथ उनके आत्मसम्मान, सांस्कृतिक अस्मिता और अस्तित्व की रक्षा के संघर्ष को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करती है। इसी कारण *धार* समकालीन हिंदी साहित्य में आदिवासी विमर्श और स्त्री-विमर्श की एक प्रतिनिधि तथा अत्यंत महत्त्वपूर्ण कृति के रूप में स्थापित होती है।

संदर्भ सूची:

1. संजीव. धार. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, नवीनतम संस्करण।
2. संजीव. जंगल जहाँ शुरू होता है. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
3. गुप्ता, रमणिका. आदिवासी साहित्य और विमर्श. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन।
4. मीणा, हरिराम. आदिवासी दुनिया. नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
5. मीणा, गंगासहाय. आदिवासी विमर्श और हिंदी साहित्य. जयपुर : साहित्यागार।
6. पाण्डेय, मैनेजर. साहित्य और समाज. नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन।